अध्याय 5

संस्थाओं का कामकाज

परिचय

लोकतंत्र का मतलब लोगों द्वारा अपने शासकों का चुनाव करना भर नहीं है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में शासकों को भी कुछ कायदे-कानूनों को मानना होता है। उन्हें भी संस्थाओं के साथ और संस्थाओं के भीतर ही रहकर काम करना होता है। यह अध्याय लोकतंत्र में संस्थाओं के कामकाज से संबंधित है। हम इसमें समझने का प्रयास करेंगे कि हमारे देश में किस तरह महत्त्वपूर्ण फ़ैसले करके उन्हें लागू किया जाता है। हम यह भी देखेंगे कि इन फ़ैसलों से संबंधित विवादों को किस तरह सुलझाया जाता है। इस अध्याय में हम इन फ़ैसलों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली तीन संस्थाओं–विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका–पर ध्यान केंद्रित करेंगे।

आप पहले की कक्षाओं में इन संस्थाओं के बारे में कुछ जानकारी हासिल कर चुके होंगे। हम यहाँ उनका संक्षेप में वर्णन करके कुछ और महत्त्वपूर्ण सवालों पर ध्यान देंगे। हर संस्था के संबंध में हम यह प्रश्न करेंगे कि वह किस तरह के काम करती है? एक संस्था दूसरी संस्था से कैसे जुड़ी है? इनके कामों को क्या चीज़ कम या ज़्यादा लोकतांत्रिक बनाती है? इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य यह समझना है कि किस तरह ये संस्थाएँ मिलकर सरकार का काम करती हैं। कई बार हम इनकी तुलना दूसरी लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं की इसी तरह की संस्थाओं से करते हैं। इस अध्याय में हम राष्ट्रीय स्तर की सरकार के कामकाज से उदाहरण देंगे, राष्ट्रीय स्तर पर भारत की सरकार को केंद्र या संघ की सरकार भी कहा जाता है। इस अध्याय को पढ़ते हुए आप अपने प्रदेश की सरकार के कामकाज के उदाहरणों पर भी नज़र रख सकते हैं।

5.1 प्रमुख नीतिगत फ़ैसले कैसे किए जाते हैं?

एक सरकारी आदेश

13 अगस्त 199 के दिन भारत सरकार ने एक आदेश जारी किया। इसे कार्यालय ज्ञापन कहा गया। सभी सरकारी आदेशों की तरह, इस ज्ञापन पर भी एक संख्या थी। यह आदेश उसी संख्या से जाना जाता है: ओ.एम.नं. 3612/31/9। कार्मिक, जनशिकायत और पेंशन मंत्रालय के कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग के एक संयुक्त सचिव, ने इस आदेश पर दस्तखत किए थे। यह छोटा-सा आदेश, मुश्किल से एक पन्ने का था। अगर आप इसे देखेंगे तो यह एक वैसा ही आम सर्कुलर या नोटिस लगेगा जैसे आपने स्कूल में देखे होंगे। सरकार हर रोज विभिन्न मसलों पर सैकड़ों आदेश जारी करती है। लेकिन यह आदेश बहुत महत्त्वपूर्ण था और कई सालों तक विवाद का कारण बना रहा। आइए देखें कि यह निर्णय किस तरह लिया गया और इसके बाद क्या हुआ।

इस सरकारी आदेश में एक प्रमुख नीतिगत फ़ैसले की घोषणा की गई थी। इसमें कहा गया

G.I., Dept. of Per. & Trg., O.M. No.36012/31/90-Est. (SCT), dated 13.8.1990

SUBJECT: 27% Reservation for Socially and Educationally Backward Classes in Civil Posts/ Services.

In a multiple undulating society like ours, early achievement of the objective of social justice as enshrined in the Constitution is a must. The Second Backward Classes Commission, called the MANDAL COMMISSION, was established by the then Government with this purpose in view, which submitted its report to the Government of India on 31st December, 1980.

2. Government have carefully considered the report and the recommendations of the Commission in the present context regarding the benefits to be extended to the socially and educationally backward classes as opined by the Commission and are of the clear view that at the outset certain weightage has to be provided to such classes in the services of the Union and their Public Undertakings. Accordingly orders are issued as follows :-

(i) 27% of the vacancies in civil posts and services under the Government of India shall be reserved for SEBC;

(ii) The aforesaid reservation shall apply to vacancies to be filled by direct

G.I., Dept. of Per. & Trg., O.M. No.36012/22/93-Est. (SCT) dated 8.9.1993

SUBJECT: ***Reservation for Other Backward Classes in Civil Posts and Services under the Government of India - Regarding.***

The undersigned is directed to refer to this Department's O.M. No.36012/31/90-Estt. (SCT), dated the 13th August, 1990[1] and 25th September, 1991[2], regarding reservation for Socially and Educationally Backward Classes in Civil Posts and Services under the Government of India and to say that following the Supreme Court judgement in the Indira Sawhney and other v. Union of India and others case [Writ Petition (Civil) No.930 of 1990], the Government of India appointed an Expert Committee to recommend the criteria for exclusion of the socially advanced persons/sections from the benefits of reservations for Other Backward Classes in civil posts and services under the Government of India.

था कि भारत सरकार के सरकारी पदों और सेवाओं में 27 फीसदी रिक्तियाँ सामाजिक एवं शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों (एसईबीसी) के लिए आरक्षित होंगी। अब तक जिन जाति समूहों को सरकार पिछड़ा मानती है उन्हीं का एक और नाम एसईबीसी (सोशली एंड एजुकेशनली बैकवर्ड क्लासेज) हैं। अब तक नौकरी में आरक्षण का लाभ केवल अनुसूचित जाति और जनजातियों को ही मिल रहा था। अब एसईबीसी या 'सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों' के लिए, तीसरी श्रेणी तैयार की जा रही थी और इनके लिए 27 फीसदी का अलग कोटा तैयार किया जा रहा था। अन्य लोग इन 27 फीसदी नौकरियों के लिए प्रतियोगिता नहीं कर सकते थे।

निर्णय करने वाले

इस ज्ञापन को जारी करने का फ़ैसला किसने किया? ज़ाहिर है, अकेले उस व्यक्ति ने इतना बड़ा फ़ैसला नहीं किया होगा जिसके हस्ताक्षर उस दस्तावेज पर थे। वह अपने मंत्री द्वारा दिए गए निर्देशों को लागू करने वाला अधिकारी था। कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग के मंत्री ने भी खुद यह निर्णय नहीं किया होगा। आप अनुमान लगा सकते हैं कि इतने बड़े निर्णय में देश के सभी प्रमुख अधिकारी शामिल रहे होंगे। आपने पिछली कक्षा में इनमें से कुछ के बारे में पहले पढ़ लिया होगा। अब एक बार फिर इन प्रमुख बिंदुओं पर सरसरी नज़र डालते हैं:

- राष्ट्रपति राष्ट्राध्यक्ष होता है और औपचारिक रूप से देश का सबसे बड़ा अधिकारी होता है।
- प्रधानमंत्री सरकार का प्रमुख होता है और दरअसल सरकार की ओर से अधिकांश अधिकारों का इस्तेमाल वही करता है।
- प्रधानमंत्री की सिफ़ारिश पर राष्ट्रपति मंत्रियों को नियुक्त करता है। इनसे बनने वाले मंत्रिमंडल की बैठकों में ही राजकाज से जुड़े अधिकतर निर्णय लिए जाते हैं।
- संसद में राष्ट्रपति और दो सदन होते हैं– लोकसभा और राज्यसभा। प्रधानमंत्री को लोकसभा के सदस्यों के बहुमत का समर्थन हासिल होना ज़रूरी है।

तो, क्या कार्यालय ज्ञापन के फ़ैसले के मामले में ये सब शामिल थे? इसके बारे में पता करते हैं।

खुद करें, खुद सीखें

- ऊपर बतायी गयी बातों के अलावा इन संस्थाओं के बारे में पिछली कक्षाओं की और कौन-सी बातें आपको याद हैं? कक्षा में उस पर चर्चा करें।
- क्या आप अपनी राज्य सरकार द्वारा लिए गए किसी बड़े फ़ैसले को याद कर सकते हैं? राज्यपाल, मंत्रिमंडल, राज्य विधानसभा और न्यायालय किस तरह इस निर्णय में शामिल थे?

यह सरकारी आदेश एक लंबे घटनाचक्र का परिणाम था। भारत सरकार ने 1979 में दूसरा पिछड़ी जाति आयोग गठित किया था। इसकी अध्यक्षता बी.पी. मंडल ने की थी और इसी के कारण इसे आम तौर पर मंडल आयोग कहते हैं। इसे भारत में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की पहचान के लिए मापदंड तय करने और उनका पिछड़ापन दूर करने के उपाय बताने का जिम्मा सौंपा गया। इस आयोग ने 198 में अपनी सिफ़ारिशें दी। आयोग द्वारा सुझाए गए उपायों में एक सिफ़ारिश थी–सरकारी नौकरियों में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए 27 फीसदी आरक्षण देना। इस रिपोर्ट और उसकी सिफ़ारिशों पर संसद में चर्चा हुई।

वर्षों तक कई पार्टियाँ और सांसद इसे लागू करने की माँग करते रहे। फिर 1989 का

क्या हर सरकारी आदेश एक बड़ा राजनैतिक फ़ैसला होता है? इस सरकारी आदेश में खास बात है।

अब आई बात समझ में इसीलिए वे राजनीति के मंडलीकरण की बात करते हैं। ठीक कहा न मैंने?

कार्टून बूझें

सन् 1990-91 में आरक्षण पर बहस का मुद्दा इतना महत्त्वपूर्ण था कि विज्ञापनकर्ताओं ने अपने उत्पाद को बेचने के लिए इस विषय का उपयोग किया। क्या आप अमूल के इन होर्डिंग में राजनैतिक घटनाओं और बहसों की ओर कोई इशारा ढूँढ़ सकते हैं?

लोकसभा चुनाव हुआ। जनता दल ने अपने चुनाव घोषणापत्र में वादा किया कि सत्ता में आने पर वह मंडल आयोग की सिफ़ारिशों को लागू करेगा। चुनाव के बाद जनता दल की ही सरकार बनी और इसके नेता वी.पी. ङ्क्षसह प्रधानमंत्री बने। इसके बाद कई घटनाएँ हुईं:

- नयी सरकार ने संसद में राष्ट्रपति के भाषण के जरिए मंडल रिपोर्ट लागू करने की अपनी मंशा की घोषणा की।
- 6 अगस्त 199 को केंद्रीय कैबिनेट की बैठक में इसके बारे में एक औपचारिक निर्णय किया गया।
- अगले दिन प्रधानमंत्री वी.पी. ङ्क्षसह ने एक बयान के ज़रिए इस निर्णय के बारे में संसद के दोनों सदनों को सूचित किया।

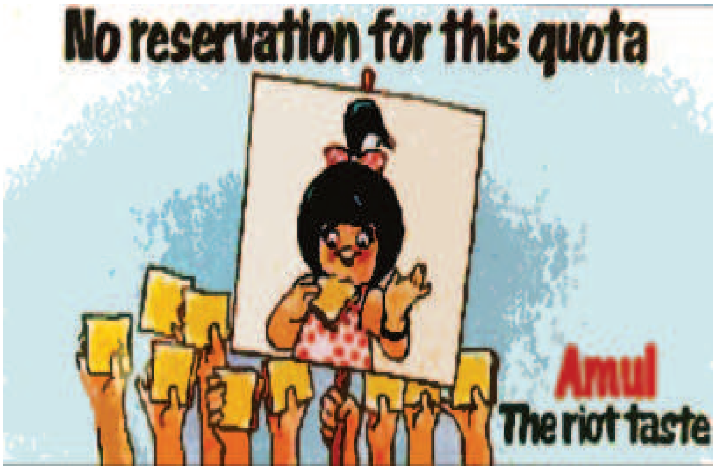

© गुजरात सहकारी दुग्ध संघ, भारत

- कैबिनेट के फ़ैसले को कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग को भेज दिया गया। विभाग के वरिष्ठ अधिकारियों ने कैबिनेट के निर्णय के मुताबिक एक आदेश तैयार किया और मंत्री की स्वीकृति केंद्रीय सरकार की तरफ़ से ली। एक अधिकारी ने उस आदेश पर हस्ताक्षर किए और इस तरह 13 अगस्त 199 को ओ.एम. नं. 3612/31/9 तैयार हो गया।

अगले कुछ महीनों तक यह देश का सबसे ज्यादा चर्चित मुद्दा बना रहा। सभी अखबार और पत्रिकाओं में इस मुद्दे पर तरह-तरह के विचार आये, बहस चली। इसके चलते कई प्रदर्शन और जवाबी प्रदर्शन हुए। इनमें से कुछ हिंसक भी थे। इससे नौकरियों के हज़ारों अवसर प्रभावित होने वाले थे इसलिए लोगों की प्रतिक्रिया बहुत तीखी थी। कुछ लोगों का मानना था कि भारत में विभिन्न जातियों के बीच असमानता के कारण ही नौकरियों में आरक्षण ज़रूरी है। उनका मानना था कि इससे उन लोगों को बराबरी पर आने का मौका मिलेगा जिनको सरकारी नौकरियों में अभी तक उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिला है।

दूसरे पक्ष के लोगों का मानना था कि इस निर्णय से जो पिछड़े वर्ग के नहीं हैं उनके अवसर छिनेंगे। अधिक योग्यता होने पर भी उनको नौकरियाँ नहीं मिलेंगी। कुछ लोगों का मानना था कि इससे जातिवाद बढ़ेगा जिससे देश की प्रगति और एकता पर असर होगा। यह निर्णय अच्छा था या नहीं–इस अध्याय में हम इस बारे में बात नहीं करेंगे। हम इस उदाहरण को यहाँ सिर्फ़ यह समझाने के लिए बता रहे हैं कि देश में प्रमुख निर्णय कैसे लिए जाते हैं और उन्हें कैसे लागू किया जाता है।

फिर इस विवाद का निपटारा किसने किया? आप जानते हैं कि सरकारी निर्णय से उठने वाले

विवादों का निपटारा सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय करते हैं। इस आदेश के विरोधी कुछ लोगों और संस्थाओं ने अदालतों में कई मुकदमे दायर कर दिए। उन्होंने अदालत से इस आदेश को अवैध घोषित करके लागू होने से रोकने की अपील की। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने इन सभी मुकदमों को एक साथ जोड़ दिया। इस मुकदमे को 'इंदिरा साहनी एवं अन्य बनाम भारत सरकार मामला' कहा जाता है। सर्वोच्च न्यायालय के 11 सबसे वरिष्ठ न्यायाधीशों ने दोनों पक्षों की दलीलें सुनीं। उन्होंने 1992 में बहुमत से फ़ैसला किया कि भारत सरकार का यह आदेश अवैध नहीं है। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार से उसके मूल आदेश में कुछ संशोधन करने को कहा। उसने कहा कि पिछड़े वर्ग के अच्छी स्थिति वाले लोगों को आरक्षण का लाभ नहीं मिलना चाहिए। उसी के मुताबिक, 8 सितंबर 1993 को कार्मिक एवं प्रशिक्षण मंत्रालय ने एक और आदेश ज़ारी किया। यह विवाद सुलझ गया और तभी से इस नीति पर अमल किया जा रहा है।

आरक्षण के मामले में किसने क्या किया?

सर्वोच्च न्यायालय	मंडल आयोग की सिफ़ारिशों को लागू करने की औपचारिक घोषणा की।
कैबिनेट	आदेश जारी करके घोषणा को लागू किया।
राष्ट्रपति	27 फीसदी आरक्षण देने का फ़ैसला किया।
सरकारी अधिकारी	आरक्षण को वैध करार दिया।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

राजनैतिक संस्थाओं की आवश्यकता

हमने एक उदाहरण देखा कि सरकार कैसे काम करती है। किसी देश को चलाने में इस तरह की कई गतिविधियाँ शामिल होती हैं। मिसाल के तौर पर, सरकार पर नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करने और सबको शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाएँ मुहैया कराने की ज़िम्मेदारी होती है। वह कर इकट्ठा करती है और इसे सेना, पुलिस तथा विकास कार्यक्रमों पर खर्च करती है। वह विभिन्न कल्याणकारी योजनाएँ बनाकर उन्हें लागू करती है। कुछ व्यक्तियों को इन गतिविधियों को चलाने के लिए फ़ैसला करना होता है। कुछ लोगों को इन्हें लागू कराना होता है। अगर इन फ़ैसलों या फिर लागू करने में कोई विवाद उठता है तो यह तय करने वाला भी कोई होना चाहिए कि क्या सही है और क्या गलत है। सबके लिए यह जानना भी ज़रूरी है कि कौन किस काम को करने के लिए ज़िम्मेदार है। यह भी ज़रूरी है कि भले ही प्रमुख पदों पर बैठे लोग बदल जाएँ लेकिन ये गतिविधियाँ जारी रहें।

लिहाज़ा, सभी आधुनिक लोकतांत्रिक देशों में इन कामों को देखने के लिए विभिन्न व्यवस्थाएँ की गई हैं। इस तरह की व्यवस्थाओं को संस्थाएँ कहते हैं। कोई भी लोकतंत्र तभी ठीक से काम करता है जब ये संस्थाएँ अपने काम को अच्छी

आपके स्कूल को चलाने के लिए कौन-सी संस्थाएँ काम करती हैं? क्या यह अच्छा होता कि ज़्यादा स्कूल के कामकाज के बारे में सिर्फ एक व्यक्ति सभी फ़ैसले लेता?

तरह करती हैं। किसी भी देश के संविधान में प्रत्येक संस्था के अधिकारों और कार्यों के बारे में बुनियादी नियमों का वर्णन होता है। दिए गए उदाहरण में हमने इस तरह की विभिन्न संस्थाओं को काम करते देखा।

- प्रधानमंत्री और कैबिनेट ऐसी संस्थाएँ हैं जो सभी महत्त्वपूर्ण नीतिगत फ़ैसले करती हैं।
- मंत्रियों द्वारा किए गए फ़ैसले को लागू करने के उपायों के लिए एक निकाय के रूप में नौकरशाह ज़िम्मेदार होते हैं।
- सर्वोच्च न्यायालय वह संस्था है, जहाँ नागरिक और सरकार के बीच विवाद अंततः सुलझाए जाते हैं।

क्या आप इस उदाहरण में दूसरी संस्थाओं के बारे में सोच सकते हैं? उनकी भूमिका क्या है?

संस्थाओं के साथ काम करना आसान नहीं है। संस्थाओं के साथ कायदे-कानून जुड़े होते हैं। इनसे नेताओं के हाथ बंध सकते हैं। संस्थाओं के कामकाम में कुछ बैठकें, कुछ समितियाँ और कुछ रूटीन काम होता है। कुछ सामान्य रूटीन होता है। इनके कारण अक्सर काम में देरी और परेशानियाँ होती हैं। इसलिए संस्थाओं के साथ कामकाज में परेशानी महसूस की जा सकती है। ऐसे में कोई सोच सकता है कि एक ही व्यक्ति सारे फ़ैसले ले तो ज़्यादा बेहतर होगा। कायदे-कानून और बैठकों की क्या ज़रूरत है? पर यह सोच लोकतंत्र की बुनियादी भावना के अनुकूल नहीं है। संस्थाओं के कामकाज के तरीकों से जो कुछ परेशानियाँ होती हैं या थोड़ा वक्त लगता है, वह भी कई मायने में उपयोगी होता है। किसी भी फ़ैसले के पहले अनेक लोगों से राय-विचार करने का अवसर मिल जाता है। संस्थाओं के कारण एक अच्छा फ़ैसला झटपट करना आसान नहीं होता लेकिन संस्थाएँ बुरा फ़ैसला भी जल्दी ले पाना मुश्किल बना देती हैं। इसी कारण लोकतांत्रिक सरकारें संस्थाओं पर ज़ोर देती है।

5.2 संसद

कार्यालय ज्ञापन के उदाहरण में क्या आपको संसद की भूमिका याद है? शायद नहीं। चूंकि यह फ़ैसला संसद ने नहीं किया था, लिहाजा आपको लग सकता है कि इस फ़ैसले में संसद की कोई भूमिका नहीं थी। लेकिन पहले हम कुछ घटनाओं पर नज़र डालकर देखते हैं कि क्या उनमें संसद का कहीं कोई ज़िक्र था। हम उन्हें निम्नलिखित वाक्यों को पूरा करके याद करने की कोशिश करते हैं:

- मंडल आयोग की रिपोर्ट पर ... चर्चा हुई थी।
- भारत के राष्ट्रपति ने इसका ... ज़िक्र किया था।
- प्रधानमंत्री ने ...

यह फ़ैसला सीधे संसद में नहीं किया गया था। लेकिन इस रिपोर्ट पर संसद में हुई चर्चा से सरकार की राय प्रभावित हुई थी। इसकी वजह से सरकार पर मंडल आयोग की सिफ़ारिश पर कार्रवाई करने के लिए दबाव पड़ा था। अगर संसद इस फ़ैसले के पक्ष में नहीं होती तो सरकार यह कदम नहीं उठा सकती थी। क्या आप अंदाज़ा लगा सकते हैं कि क्यों सरकार यह कदम नहीं उठा सकती थी? आपने पहले की कक्षा में संसद के बारे में जो पढ़ा है उसे याद करके यह कल्पना करने की कोशिश कीजिए कि अगर संसद ने कैबिनेट के फ़ैसले को मंजूरी न दी होती तो क्या होता?

हमें संसद की आवश्यकता क्यों है ?

हर लोकतंत्र में निर्वाचित जन प्रतिनिधियों की सभा, जनता की ओर से सर्वोच्च राजनैतिक अधिकार का प्रयोग करती है। भारत में निर्वाचित प्रतिनिधियों की राष्ट्रीय सभा को संसद कहा जाता है। राज्य स्तर पर इसे विधानसभा कहते हैं। अलग-अलग देशों में इनके नाम अलग-अलग हो सकते हैं पर हर लोकतंत्र में निर्वाचित प्रतिनिधियों की सभा होती है। यह जनता की ओर से कई तरह से राजनैतिक अधिकार का प्रयोग करती है:

1. किसी भी देश में कानून बनाने का सबसे बड़ा अधिकार संसद को होता है। कानून बनाने या विधि निर्माण का यह काम इतना महत्त्वपूर्ण होता है कि इन सभाओं को विधायिका कहते हैं। दुनिया भर की संसदें नए कानून बना सकती हैं, मौजूदा कानूनों में संशोधन कर सकती हैं या मौजूदा कानून को खत्म कर उसकी जगह नये कानून बना सकती हैं।
2. दुनिया भर में संसद सरकार चलाने वालों को नियंत्रित करने के लिए कुछ अधिकारों का प्रयोग करती हैं। भारत जैसे देश में उसे सीधा और पूर्ण नियंत्रण हासिल है। संसद के पूर्ण समर्थन की स्थिति में ही सरकार चलाने वाले फ़ैसले कर सकते हैं।
3. सरकार के हर पैसे पर संसद का नियंत्रण होता है। अधिकांश देशों में संसद की मंजूरी के बाद ही सार्वजनिक पैसे को खर्च किया जा सकता है।
4. सार्वजनिक मसलों और किसी देश की राष्ट्रीय नीति पर चर्चा और बहस के लिए संसद ही सर्वोच्च संघ है। संसद किसी भी मामले में सूचना माँग सकती है।

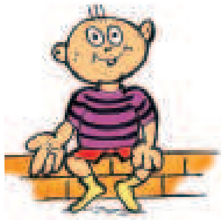

जब हमें मालूम है कि जिस पार्टी की सरकार है उसके विचार ही प्रभावी होंगे तो संसद में इतनी बहस और चर्चा करने का क्या मतलब है?

संसद के दो सदन

चूँकि आधुनिक लोकतंत्रों में संसद बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, लिहाजा अधिकांश बड़े देशों ने संसद की भूमिका और अधिकारों को दो हिस्सों में बाँट दिया है। इन्हें चेंबर या सदन कहते हैं। पहले सदन के सदस्य आम तौर से सीधे जनता द्वारा चुने जाते हैं और जनता की ओर से असली अधिकारों का प्रयोग करते हैं। दूसरे सदन के सदस्य अमूमन परोक्ष रूप से चुने जाते हैं और कुछ विशेष काम करते हैं। दूसरे सदन का सामान्य काम विभिन्न राज्य, क्षेत्र और संघीय इकाइयों के हितों की निगरानी करना होता है।

हमारे देश में संसद के दो सदन हैं। दोनों सदनों में एक को राज्यसभा (काउंसिल ऑफ स्टेट्स) और दूसरे को लोकसभा (हाउस ऑफ पी'पल) के नाम से जाना जाता है। भारत का राष्ट्रपति संसद का हिस्सा होता है हालांकि वह दोनों में से किसी भी सदन का सदस्य नहीं होता। इसीलिए संसद के फ़ैसले राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद ही लागू होते हैं।

आपने पिछली कक्षाओं में भारतीय संसद के बारे में पढ़ा है। अध्याय 4 से आपको पता चल गया है कि लोकसभा का चुनाव कैसे होता है। अब संसद के दोनों सदनों के गठन में प्रमुख अंतर को याद करते हैं। इन मामलों में लोकसभा और राज्यसभा के बारे में अलग-अलग जवाब दीजिए:

- कुल सदस्यों की संख्या कितनी होती है?...
- सदस्यों को कौन चुनता है?...
- उनका कार्यकाल कितना होता है?...
- क्या सदन को हमेशा के लिए भंग किया जा सकता है या वह स्थायी है?...

लोकसभा बनाम राज्य सभा

दोनों सदनों में से अधिक प्रभावशाली कौन है? राज्यसभा को कभी-कभी 'अपर हाउस' और लोकसभा को 'लोअर हाउस' कहा जाता है। इसका यह मतलब नहीं है कि राज्यसभा लोकसभा से ज़्यादा प्रभावशाली होती है। यह महज बोलचाल की पुरानी शैली है और हमारे संविधान में यह भाषा इस्तेमाल नहीं की गई है।

हमारे संविधान में राज्यों के संबंध में राज्यसभा को कुछ विशेष अधिकार दिए गए हैं। लेकिन अधिकतर मसलों पर सर्वोच्च अधिकार लोकसभा के पास ही है। आइए देखें, कैसे:

1. किसी भी सामान्य कानून को पारित करने के लिए दोनों सदनों की ज़रूरत होती है। लेकिन अगर दोनों सदनों के बीच कोई मतभेद हो तो अंतिम फ़ैसला दोनों के संयुक्त अधिवेशन में किया जाता है। इसमें दोनों सदनों के सदस्य एक साथ बैठते हैं। सदस्यों की संख्या अधिक होने के कारण इस तरह की बैठक में लोकसभा के विचार को प्राथमिकता मिलने की संभावना रहती है।
2. लोकसभा पैसे के मामलों में अधिक अधिकारों का प्रयोग करती है। लोकसभा में सरकार का बजट या पैसे से संबंधित कोई कानून पारित हो जाए तो राज्यसभा उसे खारिज नहीं कर सकती। राज्यसभा उसे पारित करने में केवल 14 दिनों की देरी कर सकती है या उसमें संशोधन के सुझाव दे सकती है। यह लोकसभा का अधिकार है कि वह उन सुझावों को माने या न माने।
3. सबसे बड़ी बात तो यह है कि लोकसभा मंत्रिपरिषद् को नियंत्रित करती है। सिर्फ़ वही व्यक्ति प्रधानमंत्री बन सकता है जिसे लोकसभा में बहुमत हासिल हो। अगर आधे से अधिक लोकसभा सदस्य यह कह दें कि उन्हें मंत्रिपरिषद् पर 'विश्वास नहीं' है तो प्रधानमंत्री समेत सभी मंत्रियों को पद छोड़ना होगा। राज्यसभा को यह अधिकार हासिल नहीं है।

खुद करें, खुद सीखें

संसद सत्र के दौरान दूरदर्शन पर लोकसभा और राज्यसभा की कार्यवाहियों पर रोज़ाना एक विशेष कार्यक्रम आता है। कार्यवाहियों को देखकर या अखबारों में उसके बारे में पढ़कर निम्नलिखित चीज़ों की सूची बनाएँ।

- संसद के दोनों सदनों के अधिकार
- अध्यक्ष की भूमिका
- विपक्ष की भूमिका

लोकसभा में एक दिन ...

चौदहवीं लोकसभा के कार्यकाल में 7 दिसंबर 2004 एक सामान्य दिन था। आइए इस बात पर गौर करें कि सदन में इस दिन क्या हुआ। इस दिन की कार्रवाई के आधार पर संसद की भूमिका और अधिकारों की पहचान करें। आप अपनी कक्षा में इस दिन की कार्रवाई का अभिनय कर सकते हैं।

11.00 विभिन्न मंत्रियों ने सदस्यों द्वारा पूछे गए करीब 250 प्रश्नों के लिखित जवाब दिए। इन प्रश्नों में शामिल थे:

- कश्मीर के आतंकवादी समूहों से बातचीत के बारे में सरकार की नीति क्या है?
- पुलिस और आम लोगों द्वारा अनुसूचित जनजातियों के खिलाफ़ किए गए अत्याचारों का आँकड़ा बताएँ।
- बड़ी कंपनियों द्वारा दवाएँ अत्यधिक महँगी किए जाने के बारे में सरकार क्या कर रही है?

12.00 ढेर सारे सरकारी दस्तावेज़ चर्चा के लिए पेश किए गए। इन दस्तावेज़ों में शामिल थे:

- भारत-तिब्बत सीमा पुलिस बल में नियुक्ति के नियम
- इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, खड़गपुर की वार्षिक रिपोर्ट
- राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड, विशाखापत्तनम की रिपोर्ट और लेखा-जोखा

12.02 पूर्वोत्तर क्षेत्र के विकास मंत्री ने पूर्वोत्तर परिषद् को पुनर्जीवित करने के बारे में बयान दिया।

- रेल राज्य मंत्री ने एक वक्तव्य देकर बताया कि स्वीकृत रेल बजट के अतिरिक्त रेलवे को और अनुदान की ज़रूरत है।
- मानव संसाधन विकास मंत्री ने अल्पसंख्यक शैक्षिक संस्थान विधेयक, 2004 के लिए राष्ट्रीय आयोग की घोषणा की। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि इसके लिए सरकार को अध्यादेश क्यों लाना पड़ा।

12.14 कई सदस्यों ने कुछ मुद्दों को उठाया, जिनमें शामिल थे:

- तहलका मामले में कुछ नेताओं के खिलाफ़ मामले दर्ज करने में केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सीबीआई) का प्रतिशोधात्मक रवैया।
- संविधान में एक आधिकारिक भाषा के रूप में राजस्थानी को शामिल करने की ज़रूरत।
- आंध्र प्रदेश के किसानों और कृषि मज़दूरों की बीमा नीतियों के नवीनीकरण की आवश्यकता।

2.26 सरकार द्वारा प्रस्तावित दो विधेयकों पर विचार करके उन्हें पारित किया गया। ये विधेयक थे:

- प्रतिभूति कानून (संशोधन) विधेयक
- प्रतिभूति ब्याज और ऋण वसूली कानून का प्रत्यावर्तन (संशोधन) विधेयक

4.00 आखिर में सरकार की विदेश नीति और इराक की स्थिति के संदर्भ में स्वतंत्र विदेश नीति ज़ारी रखने की ज़रूरत पर लंबी चर्चा हुई।

7.17 चर्चा समाप्त हुई। सदन अगले दिन तक के लिए स्थगित हुआ।

5.3 राजनैतिक कार्यपालिका

क्या आपको उस सरकारी आदेश की कहानी याद है जिससे हमने इस अध्याय की शुरुआत की थी? हमने पाया कि जिस व्यक्ति ने इस दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर किए थे उसने यह फ़ैसला नहीं किया था। वह केवल एक नीतिगत फ़ैसले को लागू कर रहा था जिसे किसी और ने किया था। हमने यह फ़ैसला करने में प्रधानमंत्री की भूमिका देखी थी। लेकिन, हम यह भी जानते हैं कि अगर उन्हें लोकसभा का समर्थन नहीं होता तो वे यह फ़ैसला नहीं कर सकते थे। इस अर्थ में वे सिर्फ़ संसद की मर्ज़ी को लागू कर रहे थे।

इसी तरह किसी भी सरकार के विभिन्न स्तरों पर हमें ऐसे अधिकारी मिलते हैं जो रोज़मर्रा के फ़ैसले करते हैं लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि वे जनता के द्वारा दिए गए सबसे बड़े अधिकारों का इस रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं। इन सभी अधिकारियों को सामूहिक रूप से कार्यपालिका के रूप में जाना जाता है। सरकार की नीतियों को 'कार्यरूप' देने के कारण इन्हें कार्यपालिका कहा जाता है। इस तरह जब हम 'सरकार' के बारे में बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य आम तौर पर कार्यपालिका से ही होता है।

राजनैतिक और स्थायी कार्यपालिका

किसी लोकतांत्रिक देश में कार्यपालिका के दो हिस्से होते हैं। जनता द्वारा खास अवधि तक के लिए निर्वाचित लोगों को राजनैतिक कार्यपालिका कहते हैं। ये राजनैतिक व्यक्ति होते हैं जो बड़े फ़ैसले करते हैं। दूसरी ओर जिन्हें लंबे समय के लिए नियुक्त किया जाता है उन्हें स्थायी कार्यपालिका या प्रशासनिक सेवक कहते हैं। लोक सेवाओं में काम करने वाले लोगों को सिविल सर्वेंट या नौकरशाह कहते हैं। वे सत्ताधारी पार्टी के बदलने के बावजूद अपने पदों पर बने रहते हैं। ये अधिकारी राजनैतिक कार्यपालिका के तहत काम करते हैं और रोज़मर्रा के प्रशासन में उनकी सहायता करते हैं। क्या आप कार्यालय ज्ञापन के मामले में राजनैतिक और गैर-राजनैतिक कार्यपालिका की भूमिका बता सकते हैं?

आप पूछ सकते हैं कि राजनैतिक कार्यपालक को गैर-राजनैतिक कार्यपालक से ज़्यादा अधिकार क्यों होते हैं? मंत्री किसी नौकरशाह से ज़्यादा प्रभावशाली क्यों होता है? नौकरशाह अमूमन अधिक शिक्षित होता है और उसे विषय की अधिक महारथ और जानकारी होती है। वित्त मंत्रालय में काम करने वाले सलाहकारों को अर्थशास्त्र की जानकारी वित्त मंत्री से ज़्यादा हो सकती है। कभी-कभी मंत्रियों को अपने मंत्रालय के अधीनस्थ मामलों की तकनीकी जानकारी बहुत कम हो सकती है। रक्षा, उद्योग, स्वास्थ्य, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, खान आदि मंत्रालयों में ऐसा होना आम बात है। फिर इन मामलों में अंतिम निर्णय करने का अधिकार मंत्रियों को क्यों हो?

इसकी वजह बहुत सीधी है। किसी भी लोकतंत्र में लोगों की इच्छा सर्वोपरि होती है। मंत्री लोगों द्वारा चुना गया होता है और इस तरह उसे जनता की ओर से उनकी इच्छाओं को लागू करने का अधिकार होता है। वह अपने फ़ैसले के नतीजे के लिए लोगों के प्रति ज़िम्मेदार होता है। इसी वजह से मंत्री ही सारे फ़ैसले करता है। मंत्री ही उस ढाँचे और उद्देश्यों को तय करता है जिसमें नीतिगत फ़ैसले किए जाते हैं। किसी मंत्री से अपने मंत्रालय के मामलों का विशेषज्ञ होने की कतई उम्मीद नहीं की जाती। सभी तकनीकी मामलों पर मंत्री विशेषज्ञों की सलाह लेता है लेकिन विशेषज्ञ अकसर अलग राय रखते हैं या फिर वे एक से अधिक विकल्प मंत्री के सामने पेश करते हैं। मंत्री अपने उद्देश्यों के मुताबिक ही निर्णय लेता है।

दरअसल, ऐसा हर बड़े संगठन में होता है। जो पूरे मामले को भली-भाँति समझते हैं, वे ही सबसे महत्त्वपूर्ण फ़ैसले करते हैं, विशेषज्ञ नहीं करते। विशेषज्ञ रास्ता बता सकते हैं लेकिन व्यापक नज़रिया रखने वाला व्यक्ति ही मंज़िल के बारे में फ़ैसला करता है। लोकतंत्र में निर्वाचित मंत्री इसी व्यापक नज़रिए वाले व्यक्ति की भूमिका निभाते हैं।

प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद्

इस देश में प्रधानमंत्री सबसे महत्त्वपूर्ण राजनैतिक संस्था है। फिर भी प्रधानमंत्री के लिए कोई प्रत्यक्ष चुनाव नहीं होता। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री को नियुक्त करते हैं। लेकिन राष्ट्रपति अपनी मर्जी से किसी को प्रधानमंत्री नियुक्त नहीं कर सकते। राष्ट्रपति लोकसभा में बहुमत वाली पार्टी या पाटर्यों के गठबंधन के नेता को ही प्रधानमंत्री नियुक्त करता है। अगर किसी एक पार्टी या गठबंधन को बहुमत हासिल नहीं होता तो राष्ट्रपति उसी व्यक्ति को प्रधानमंत्री के रूप में नियुक्त करता है जिसे सदन में बहुमत हासिल होने की संभावना होती है। प्रधानमंत्री का कार्यकाल तय नहीं होता। वह तब तक अपने पद पर रह सकता है जब तक वह पार्टी या गठबंधन का नेता है।

प्रधानमंत्री को नियुक्त करने के बाद राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की सलाह पर दूसरे मंत्रियों को नियुक्त करते है। मंत्री अमूमन उसी पार्टी या गठबंधन के होते हैं जिसे लोकसभा में बहुमत हासिल हो। प्रधानमंत्री मंत्रियों के चयन के लिए स्वतंत्र होता है, बशर्ते वे संसद के सदस्य हों। कभी-कभी ऐसे व्यक्ति को भी मंत्री बनाया जा सकता है जो संसद का सदस्य नहीं हो। लेकिन उस व्यक्ति का, मंत्री बनने के छह महीने के भीतर संसद के दोनों सदनों में से किसी एक का सदस्य चुना जाना ज़रूरी है।

शंकर, डोन्ट स्पेयर मी

© चिल्ड्रंस बुक ट्रस्ट

मंत्रिपरिषद् उस निकाय का सरकारी नाम है जिसमें सारे मंत्री होते हैं। इसमें अमूमन विभिन्न स्तरों के 6 से 8 मंत्री होते हैं।

- **कैबिनेट मंत्री** अमूमन सत्ताधारी पार्टी या गठबंधन की पाटर्यों के वरिष्ठ नेता होते हैं ये प्रमुख मंत्रालयों के प्रभारी होते हैं। कैबिनेट मंत्री मंत्रिपरिषद् के नाम पर फ़ैसले करने के लिए बैठक करते हैं। इस तरह कैबिनेट मंत्रिपरिषद् का शीर्ष समूह होता है। इसमें करीब 2 मंत्री होते हैं।
- **स्वतंत्र प्रभार वाले राज्य मंत्री** अमूमन छोटे मंत्रालयों के प्रभारी होते हैं। वे विशेष रूप से आमंत्रित किए जाने पर ही कैबिनेट की बैठकों में भाग लेते हैं।
- **राज्य मंत्री** अपने विभाग के कैबिनेट मंत्रियों से जुड़े होते हैं और उनकी सहायता करते हैं।

चूँकि सारे मंत्रियों के लिए नियमित रूप से मिलकर हर बात पर चर्चा करना व्यावहारिक

कार्टून बूझें

मंत्री बनने की होड़ नयी नहीं है। यह कार्टून 1962 के बाद नेहरू मंत्रिमंडल में शामिल होने के लिए उम्मीदवारों की बेचैनी दर्शाता है। राजनेता मंत्री बनने के लिए इतने बेचैन क्यों रहते हैं? आप क्या सोचते हैं?

कार्टून बूझें

इस कार्टून में अपनी लोकप्रियता के उफान वाले 1970 के दशक के शुरुआती दिनों में इंदिरा गांधी को कैबिनेट की बैठक करते दिखाया गया है। क्या आपको लगता है कि उनके बाद बने किसी प्रधानमंत्री को इसी आकार या रूप में दिखाते हुए कार्टून बनाया जा सकता है?

नहीं है लिहाजा फ़ैसले कैबिनेट बैठकों में ही किए जाते हैं। इसी वजह से अधिकांश देशों में संसदीय लोकतंत्र को सरकार का कैबिनेट रूप कहा जाता है। कैबिनेट टीम के रूप में काम करती है। मंत्रियों की राय और विचार अलग हो सकते हैं लेकिन सबको कैबिनेट के फ़ैसले की जिम्मेदारी लेनी होती है। भले ही कोई फ़ैसला किसी दूसरे मंत्रालय या विभाग का हो लेकिन कोई भी मंत्री सरकार के फ़ैसले की खुलेआम आलोचना नहीं कर सकता। हर मंत्रालय में सचिव होते हैं, जो नौकरशाह होते हैं। ये सचिव फ़ैसला करने के लिए मंत्री को ज़रूरी सूचना मुहैया कराते हैं। टीम के रूप में कैबिनेट की मदद कैबिनेट सचिवालय करता है। उसमें कई वरिष्ठ नौकरशाह शामिल होते हैं जो विभिन्न मंत्रालयों के बीच समन्वय स्थापित करने की कोशिश करते हैं।

खुद करें, खुद सीखें

- केंद्र और अपनी राज्य सरकार के पाँच कैबिनेट मंत्रियों और उनके मंत्रालयों के नाम लिखें।
- अपने शहर के नगर निगम/पालिका प्रमुख या अपने जिले के जिला परिषद् के अध्यक्ष से मिलें और उनसे पूछें कि वे अपने शहर या जिले का प्रशासन किस तरह चलाते हैं।

प्रधानमंत्री के अधिकार

संविधान में प्रधानमंत्री या मंत्रियों के अधिकारों या एक-दूसरे से उनके संबंध के बारे में बहुत कुछ नहीं कहा गया है। लेकिन सरकार के प्रमुख के नाते प्रधानमंत्री के व्यापक अधिकार होते हैं। वह कैबिनेट की बैठकों की अध्यक्षता करता है। वह विभिन्न विभागों के कार्य का समन्वय

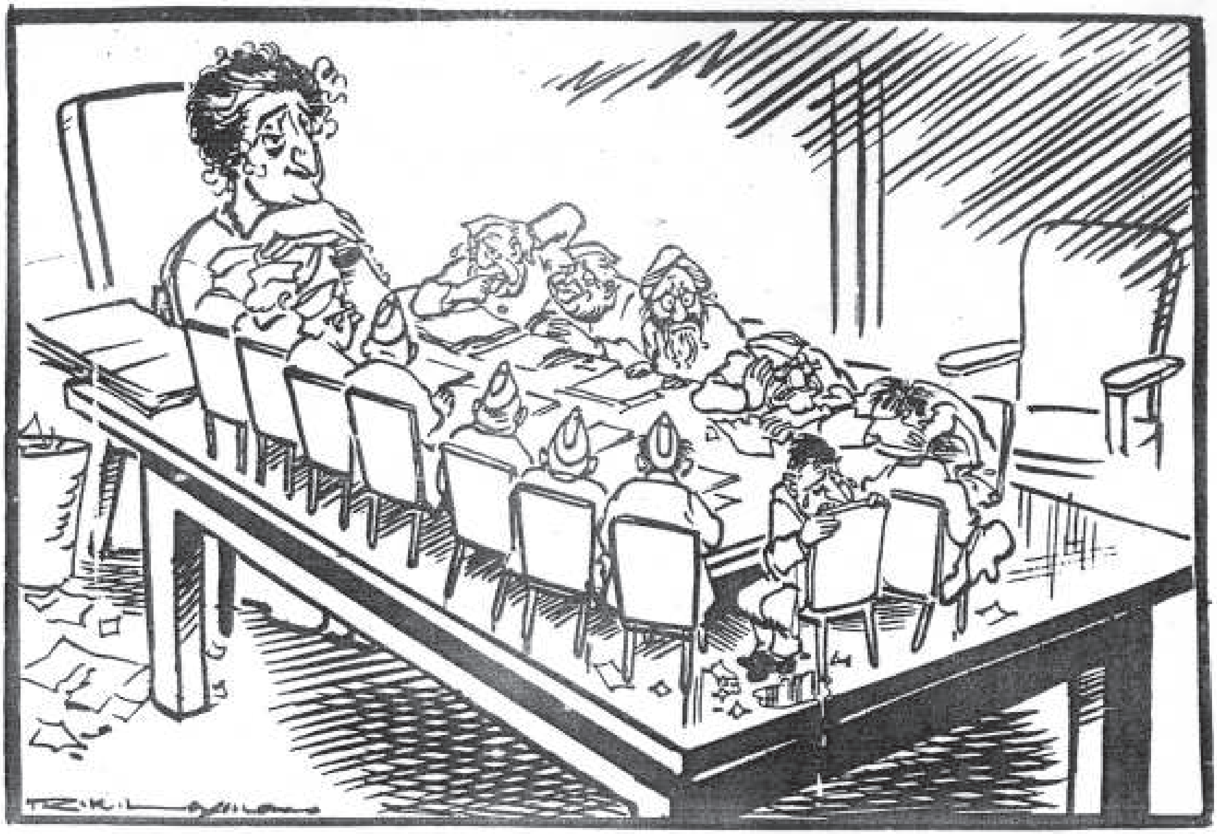

© आर.के. लक्ष्मण, द टाइम्स ऑफ इंडिया

करता है। विभागों के विवाद के मामले में उसका निर्णय अंतिम माना जाता है। वह विभिन्न विभागों की सामान्य निगरानी करता है। सारे मंत्री उसी के नेतृत्व में काम करते हैं। प्रधानमंत्री मंत्रियों को काम का वितरण और पुनॢवतरण करता है। उसे किसी मंत्री को बर्खास्त करने का भी अधिकार होता है। जब प्रधानमंत्री अपना पद छोड़ता है तो पूरा मंत्रिमंडल इस्तीफ़ा दे देता है।

इस तरह अगर भारत में कैबिनेट सबसे अधिक प्रभावशाली संस्था है तो कैबिनेट के भीतर सबसे प्रभावशाली व्यक्ति प्रधानमंत्री होता है। दुनिया के सभी संसदीय लोकतंत्रों में प्रधानमंत्री के अधिकार हाल के दशकों में इतने बढ़ गए हैं कि संसदीय लोकतंत्र को कभी-कभी सरकार का प्रधानमंत्रीय रूप कहा जाने लगा है। राजनीति में राजनैतिक दलों/पाॢटयों की भूमिका बढ़ने के साथ ही प्रधानमंत्री पार्टी के जरिए कैबिनेट और संसद को नियंत्रित करने लगा है। मीडिया राजनीति और चुनाव को पाॢटयों के वरिष्ठ नेताओं के बीच प्रतिस्पर्धा के रूप में पेश करके इस रुझान में अपना योगदान करती है। भारत में भी हमने प्रधानमंत्री के पास ही सारे अधिकार सीमित करने की प्रवृत्ति देखी है। भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने ढेर सारे अधिकारों का इस्तेमाल किया क्योंकि उनका जनता पर बहुत अधिक प्रभाव था। इंदिरा गांधी भी कैबिनेट के अपने सहयोगियों की तुलना में बहुत ज़्यादा प्रभावशाली थीं। ज़ाहिर है कि किसी प्रधानमंत्री का अधिकार उस पद पर बैठे व्यक्ति के व्यक्तित्व पर भी निर्भर करता है।

लेकिन हाल के वर्षों में भारत में गठबंधन की राजनीति के उभार से प्रधानमंत्री के अधिकार कुछ हद तक सीमित हुए हैं। गठबंधन सरकार का प्रधानमंत्री अपनी मर्ज़ी से फ़ैसले नहीं कर सकता। उसे अपनी पार्टी के भीतर विभिन्न समूहों और गुटों के साथ गठबंधन के साझीदारों की राय भी माननी होती है। इसके अलावा उसे गठबंधन के साझीदारों और दूसरी पाॢटयों के विचारों और स्थितियों को भी देखना होता है, आखिर उन्हीं के समर्थन के आधार पर सरकार टिकी होती है।

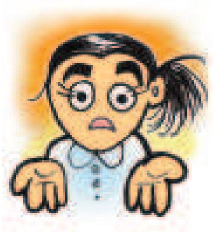

प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति के लिए हमेशा पुल्लिंग का इस्तेमाल क्यों होता है?

राष्ट्रपति

एक ओर जहाँ प्रधानमंत्री सरकार का प्रमुख होता है, वहीं राष्ट्रपति राष्ट्राध्यक्ष होता है। हमारी राजनैतिक व्यवस्था में राष्ट्राध्यक्ष केवल नाम के अधिकारों का प्रयोग करता है। भारत का राष्ट्रपति ब्रिटेन की महारानी की तरह होता हैं, जिसका काम आलंकारिक अधिक होता है। राष्ट्रपति देश की सभी राजनैतिक संस्थाओं के काम की निगरानी करता है ताकि वे राज्य के उद्देश्यों को हासिल करने के लिए मिल-जुलकर काम करें।

राष्ट्रपति का चयन जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जाता। संसद सदस्य और राज्य की विधानसभाओं के सदस्य उसे चुनते हैं। राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी को चुनाव जीतने के लिए बहुमत हासिल करना होता है। इससे यह तय हो जाता है कि राष्ट्रपति पूरे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है। लेकिन राष्ट्रपति उस तरह से प्रत्यक्ष जनादेश का दावा नहीं कर सकता जिस तरह से प्रधानमंत्री। इससे यह तय हो जाता है कि राष्ट्रपति कहने मात्र के लिए कार्यपालक की भूमिका निभाता है।

राष्ट्रपति के अधिकारों के मामले में भी यही बात लागू होती है। अगर आप संविधान को सरसरी तौर पर पढ़ें तो आप सोचेंगे कि ऐसा कुछ नहीं है जो राष्ट्रपति न कर सके। सारी सरकारी गतिविधियाँ राष्ट्रपति के नाम पर ही होती हैं। सारे कानून और सरकार के प्रमुख नीतिगत फ़ैसले उसी के नाम से जारी होते हैं। सभी प्रमुख नियुक्तियाँ राष्ट्रपति के नाम पर ही होती हैं। वह भारत के मुख्य न्यायाधीश, सर्वोच्च

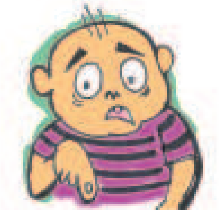

इस सवाल से तो मेरा दिमाग ही चकरा गया। जब कोई महिला राष्ट्रपति बनेगी तो क्या उसे राष्ट्रपति कहना ठीक होगा? क्या हमारी भाषा मर्दों ने बनाई है?

लोकतंत्र के लिए कैसा प्रधानमंत्री होता है? ऐसा जो केवल अपनी मर्ज़ी से काम करता है या ऐसा जो दूसरी पार्टियों और व्यक्तियों से भी सलाह लेता है?

पत्र सूचना कार्यालय

राष्ट्रपति श्री प्रणब मुखर्जी 26 मई 2014 को राष्ट्रपति भवन में श्री नरेन्द्र मोदी को प्रधान मंत्री पद की शपथ दिलाते हुए।

न्यायालय और राज्य के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों, राज्यपालों, चुनाव आयुक्तों और दूसरे देशों में राजदूतों आदि को नियुक्त करता है। सभी अंतर्राष्ट्रीय संधियाँ और समझौते उसी के नाम से होते हैं। भारत के रक्षा बलों का सुप्रीम कमांडर राष्ट्रपति ही होता है।

लेकिन हमें यह याद रखना चाहिए कि राष्ट्रपति इन अधिकारों का इस्तेमाल मंत्रिपरिषद् की सलाह पर ही करता है। राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् को अपनी सलाह पर पुनर्विचार करने के लिए कह सकता है। लेकिन अगर वही सलाह दोबारा मिलती है तो वह उसे मानने के लिए बाध्य होता हैं। इसी प्रकार संसद द्वारा पारित कोई विधेयक राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद ही कानून बनता है। अगर राष्ट्रपति चाहे तो उसे कुछ समय के लिए रोक सकता है। वह विधेयक पर पुनर्विचार के लिए उसे संसद में वापस भेज सकता है। लेकिन अगर संसद दोबारा विधेयक पारित करती है तो उसे उस पर हस्ताक्षर करने ही पड़ेंगे।

तो आप सोच रहे होंगे कि राष्ट्रपति करता क्या है? क्या वह अपने विवेक से भी कुछ कर सकता है? एक महत्त्वपूर्ण चीज़ है जो उसे स्वविवेक से करनी चाहिए: प्रधानमंत्री की नियुक्ति। जब कोई पार्टी या गठबंधन चुनाव में बहुमत हासिल कर लेता है तो राष्ट्रपति के पास कोई विकल्प नहीं होता। उसे लोकसभा में बहुमत वाली पार्टी या गठबंधन के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त करना होता है। जब किसी पार्टी या गठबंधन को लोकसभा में बहुमत हासिल नहीं होता तो राष्ट्रपति अपने विवेक से काम लेता है। वह ऐसे नेता को नियुक्त करता है जो उसकी राय में लोकसभा में बहुमत जुटा सकता है। ऐसे मामले में राष्ट्रपति नवनियुक्त प्रधानमंत्री से एक तय समय के भीतर लोकसभा में बहुमत साबित करने के लिए कहता है।

राष्ट्रपति प्रणाली

दुनिया में हर जगह राष्ट्रपति भारत की तरह औपचारिक शासनाध्यक्ष नहीं होता। दुनिया के अनेक देशों में राष्ट्रपति राष्ट्राध्यक्ष भी होता है और सरकार का मुखिया भी। अमेरिकी राष्ट्रपति इस तरह के राष्ट्रपति का जाना-माना उदाहरण है । उसका चुनाव लोग प्रत्यक्ष वोट से करते हैं। वही अपने मंत्रियों का चुनाव और नियुक्ति करता है। कानून बनाने का काम अभी भी विधायिका (अमेरिका में उसे कांग्रेस कहा जाता है) करती है पर राष्ट्रपति किसी भी कानून को वीटो के अधिकार से रोक सकता है। सबसे बड़ी बात यह है कि राष्ट्रपति बनने के लिए उसे कांग्रेस के बहुमत के समर्थन की ज़रूरत नहीं होती और न ही वह उसके प्रति उत्तरदायी है। उसका चार साल का तय कार्यकाल है और अपनी पार्टी का कांग्रेस में बहुमत न होने पर भी वह आराम से अपना कार्यकाल पूरा करता है। अमेरिकी मॉडल को लातिनी अमेरिका के अनेक देशों और सोवियत संघ का हिस्सा रहे कई देशों में अपनाया गया है। चूँकि सरकार के इस स्वरूप में राष्ट्रपति की भूमिका केंद्रीय होती है इसलिए इसे राष्ट्रपति प्रणाली कहा जाता है। ब्रिटेन के मॉडल को मानने वाले भारत जैसे देशों में संसद ही सर्वोच्च होती है। इसलिए, हमारी प्रणाली को शासन की संसदीय प्रणाली कहा जाता है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

इलियम्मा, अन्नाकुट्टी और मेरीमॉल राष्ट्रपति के विषय वाले हिस्से को पढ़ती हैं। वे तीनों एक-एक सवाल का जवाब जानना चाहती हैं। क्या आप उन्हें उनके सवालों के जवाब दे सकते हैं?

इलियम्मा: अगर राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री किसी नीति पर असहमत हों तो क्या होगा? क्या प्रधानमंत्री का विचार हमेशा प्रभावी होगा?

अन्नाकुट्टी: मुझे यह बेतुका लगता है कि सशस्त्र बलों का सुप्रीम कमांडर राष्ट्रपति हो। वह तो एक भारी बंदूक भी नहीं उठा सकता। उसे कमांडर बनाने में क्या तुक है?

मेरीमॉल: मेरा सवाल यह है कि अगर असली अधिकार प्रधानमंत्री के पास ही हैं तो राष्ट्रपति की ज़रूरत ही क्या है?

5.4 न्यायपालिका

इस बार भी हम सरकारी आदेश की उसी कहानी पर लौटते हैं, जिससे हमने शुरुआत की थी। इस बार हम कहानी को याद नहीं करेंगे, बस यह कल्पना करेंगे कि यह कहानी कितनी अलग हो सकती थी। याद कीजिए कि इस कहानी का उस समय संतोषजनक अंत हो गया जब सर्वोच्च न्यायालय ने फ़ैसला सुनाया। इसे हर किसी ने स्वीकार कर लिया। कल्पना कीजिए कि निम्नलिखित परिस्थितियों में क्या होता:

- देश में सर्वोच्च न्यायालय जैसा कुछ नहीं होता।
- सर्वोच्च न्यायालय तो होता पर उसके पास सरकार की कार्रवाइयों को आँकने का अधिकार नहीं होता।
- उसे अधिकार होता मगर सर्वोच्च न्यायालय से कोई निष्पक्ष न्याय की उम्मीद नहीं रखता।
- भले ही वह निष्पक्ष फ़ैसला सुना देता लेकिन सरकार के आदेश के खिलाफ़ अपील करने वाले उसके फ़ैसले को नहीं मानते।

खुद करें, खुद सीखें

उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के किसी बड़े फ़ैसले से जुड़ी खबरों पर गौर करें। मूल फ़ैसला क्या था? क्या अदालत ने उसमें बदलाव कर दिया? इसका कारण क्या दिया गया?

इसी वजह से लोकतंत्रों के लिए स्वतंत्र और प्रभावशाली न्यायपालिका को ज़रूरी माना जाता है। देश के विभिन्न स्तरों पर मौजूद अदालतों को सामूहिक रूप से न्यायपालिका कहा जाता

संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायाधीशों को उनके राजनैतिक विचार और दलीय जुड़ाव के आधार पर नियुक्त करना एक आम बात है। यह काल्पनिक विज्ञापन वहाँ सन् 2005 में एक कार्टून के रूप में छपा। उस समय राष्ट्रपति बुश अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय में मनोनयन के लिए विभिन्न उम्मीदवारों के नाम पर विचार कर रहे थे। यह कार्टून न्यायालय की स्वतंत्रता के बारे में क्या कहता है? हमारे देश में इस तरह के कार्टून क्यों नहीं छपते? क्या यह हमारी न्यायपालिका की स्वतंत्रता को दर्शाता है?

कार्टून बूझें

© सी.एम.ई. कोहेन, नेशनल, केगल कार्टून्स इंक

इस काल्पनिक विज्ञापन में लिखा है : आवश्यकता है सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश की। कोई पूर्व अनुभव ज़रूरी नहीं। कुछ टाइपिंग आना आवश्यक है। वह बिना हिचकिचाए ऐसी बातें कह सकेः ''मैं अभी तक जितने लोगों से मिला हूँ उनमें राष्ट्रपति (जार्ज बुश) सबसे अधिक प्रतिभाशाली हैं।'' कोई भी बाहरी व्यक्ति आवेदन न करे।

है। भारतीय न्यायपालिका में पूरे देश के लिए सर्वोच्च न्यायालय, राज्यों में उच्च न्यायालय, ज़िला न्यायालय और स्थानीय स्तर के न्यायालय होते हैं। भारत में न्यायपालिका एकीकृत है। इसका मतलब यह कि सर्वोच्च न्यायालय देश में न्यायिक प्रशासन को नियंत्रित करता है। देश की सभी अदालतों को उसका फ़ैसला मानना होता है। वह इनमें से किसी भी विवाद की सुनवाई कर सकता है:

- देश के नागरिकों के बीच;
- नागरिकों और सरकार के बीच;
- दो या उससे अधिक राज्य सरकारों के बीच; और
- केंद्र और राज्य सरकार के बीच।

यह फ़ौजदारी और दीवानी मामले में अपील के लिए सर्वोच्च संस्था है। यह उच्च न्यायालयों के फ़ैसलों के खिलाफ़ सुनवाई कर सकता है।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता का मतलब है कि वह विधायिका या कार्यपालिका के नियंत्रण में नहीं है। न्यायाधीश सरकार के निर्देश या सत्ताधारी पार्टी की मर्ज़ी के मुताबिक काम नहीं करते। इसी वजह से सभी आधुनिक लोकतंत्रों में अदालतें, विधायिका और कार्यपालिका के अधीन नहीं होतीं। भारत ने इस लक्ष्य को हासिल कर लिया है। राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को प्रधानमंत्री की सलाह पर और सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के मशविरे से नियुक्त करता है। व्यावहारिक तौर पर अब इस व्यवस्था में सर्वोच्च न्यायालय के वरिष्ठ न्यायाधीश, सर्वोच्च

न्यायालय और उच्च न्यायालयों के नए न्यायाधीशों को चुनते हैं। इसमें राजनैतिक कार्यपालिका की दखल की गुंजाइश बेहद कम है। सर्वोच्च न्यायालय के सबसे वरिष्ठ न्यायाधीश को ही अमूमन मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया जाता है। एक बार किसी व्यक्ति को सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त करने के बाद उसे उसके पद से हटाना लगभग असंभव हो जाता है। उसे हटाना भारत के राष्ट्रपति को हटाने जितना ही मुश्किल है। किसी भी न्यायाधीश को संसद के दोनों सदनों में अलग-अलग दो-तिहाई बहुमत से अविश्वास प्रस्ताव पारित करके ही हटाया जा सकता है। भारतीय लोकतंत्र में ऐसा कभी नहीं हुआ।

भारत की न्यायपालिका दुनिया की सबसे अधिक प्रभावशाली न्यायपालिकाओं में से एक है। सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों को देश के संविधान की व्याख्या का अधिकार है। अगर उन्हें लगता है कि विधायिका का कोई कानून या कार्यपालिका की कोई कार्रवाई संविधान के खिलाफ़ है तो वे केंद्र और राज्य स्तर पर ऐसे कानून या कार्रवाई को अमान्य घोषित कर सकते हैं। इस तरह जब उनके सामने किसी कानून या कार्यपालिका की कार्रवाई को चुनौती मिलती है तो वे उसकी संवैधानिक वैधता तय करते हैं। इसे न्यायिक समीक्षा के रूप में जाना जाता है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी फ़ैसला दिया है कि संसद, संविधान के मूलभूत सिद्धांतों को बदल नहीं सकती।

भारतीय न्यायपालिका के अधिकार और स्वतंत्रता उसे मौलिक अधिकारों के रक्षक के रूप में काम करने की क्षमता प्रदान करते हैं। हम नागरिकों के अधिकार वाले अध्याय में देखेंगे कि नागरिकों को संविधान से मिले अपने अधिकारों के उल्लंघन के मामले में इंसाफ़ पाने के लिए अदालतों में जाने का अधिकार है। हाल के वर्षों में अदालतों ने सार्वजनिक हित और मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए विभिन्न फ़ैसले और निर्देश दिए हैं। सरकार की कार्रवाइयों से जनहित को ठेस पहुँचने की स्थिति में कोई भी अदालत जा सकता है। इसे जनहित याचिका कहते हैं। अदालतें सरकार को निर्णय करने की शक्ति के दुरुपयोग से रोकने के लिए हस्तक्षेप करती हैं। वे सरकारी अधिकारियों को भ्रष्ट आचरण से रोकती हैं। इसी वजह से लोगों के बीच न्यायपालिका को काफ़ी विश्वास हासिल है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

निम्नलिखित संदर्भों में एक कारण देकर समझाएँ कि भारतीय न्यायपालिका किस तरह स्वतंत्र हैः

न्यायाधीशों की नियुक्तिः

न्यायाधीशों को पद से हटानाः

न्यायपालिका के अधिकारः

गठबंधन सरकार: विधायिका में किसी एक पार्टी को बहुमत हासिल न होने की सूरत में दो या उससे अधिक राजनैतिक पाॢटयों के गठबंधन से बनी सरकार।

कार्यपालिका: व्यक्तियों का ऐसा निकाय जिसके पास देश के संविधान और कानून के आधार पर प्रमुख नीति बनाने, फ़ैसले करने और उन्हें लागू करने का अधिकार होता है।

सरकार: संस्थाओं का ऐसा समूह जिसके पास देश में व्यवस्थित जन-जीवन सुनिश्चित करने के लिए कानून बनाने, लागू करने और उसकी व्याख्या करने का अधिकार होता है। व्यापक अर्थ में सरकार किसी देश के लोगों और संसाधनों को नियंत्रित और उनकी निगरानी करती है।

न्यायपालिका: एक राजनैतिक संस्था जिसके पास न्याय करने और कानूनी विवादों के निबटारे का अधिकार होता है। देश की सभी अदालतों को एक साथ न्यायपालिका के नाम से पुकारा जाता है।

विधायिका: जनप्रतिनिधियों की सभा जिसके पास देश का कानून बनाने का अधिकार होता है। कानून बनाने के अलावा विधायिका को कर बढ़ाने, बजट बनाने और दूसरे वित्त विधेयकों को बनाने का विशेष अधिकार होता है।

कार्यालय ज्ञापन: सक्षम अधिकारी द्वारा जारी पत्र जिसमें सरकार के फ़ैसले या नीति के बारे में बताया जाता है।

राजनैतिक संस्था: देश की सरकार और राजनैतिक जीवन के आचार को नियमित करने वाली प्रक्रियाओं का समूह।

आरक्षण: भेदभाव के शिकार, वंचित और पिछड़े लोगों और समुदायों के लिए सरकारी नौकरियों तथा शैक्षिक संस्थाओं में पद एवं सीटें 'आरक्षित' करने की नीति।

राज्य: निश्चित क्षेत्र में फैली राजनैतिक इकाई, जिसके पास संगठित सरकार हो और घरेलू तथा विदेश नीतियों को बनाने का अधिकार हो। सरकारें बदल सकती हैं पर राज्य बना रहता है। बोलचाल की भाषा में देश, राष्ट्र और राज्य को समानार्थी के रूप में प्रयोग किया जाता है। 'राज्य' शब्द का एक अन्य प्रयोग किसी देश के अंदर की प्रशासनिक इकाईयों या प्रांतों के लिए भी होता है। इस अर्थ में राजस्थान, झारखंड, त्रिपुरा आदि भी राज्य कहे जाते हैं।

प्रश्नावली

1. अगर आपको भारत का राष्ट्रपति चुना जाए तो आप निम्नलिखित में से कौन-सा फ़ैसला खुद कर सकते हैं?

   क. अपनी पसंद के व्यक्ति को प्रधानमंत्री चुन सकते हैं।
   ख. लोकसभा में बहुमत वाले प्रधानमंत्री को उसके पद से हटा सकते हैं।
   ग. दोनों सदनों द्वारा पारित विधेयक पर पुनॢवचार के लिए कह सकते हैं।
   घ. मंत्रिपरिषद् में अपनी पसंद के नेताओं का चयन कर सकते हैं।

2. निम्नलिखित में कौन राजनैतिक कार्यपालिका का हिस्सा होता है?

   क. जिलाधीश
   ख. गृह मंत्रालय का सचिव
   ग. गृह मंत्री
   घ. पुलिस महानिदेशक

3. न्यायपालिका के बारे में निम्नलिखित में से कौन-सा बयान गलत है?

क. संसद द्वारा पारित प्रत्येक कानून को सर्वोच्च न्यायालय की मंजूरी की ज़रूरत होती है।
ख. अगर कोई कानून संविधान की भावना के खिलाफ़ है तो न्यायापालिका उसे अमान्य घोषित कर सकती है।
ग. न्यायपालिका कार्यपालिका से स्वतंत्र होती है।
घ. अगर किसी नागरिक के अधिकारों का हनन होता है तो वह अदालत में जा सकता है।

4. निम्नलिखित राजनैतिक संस्थाओं में से कौन-सी संस्था देश के मौजूदा कानून में संशोधन कर सकती है?

क. सर्वोच्च न्यायालय
ख. राष्ट्रपति
ग. प्रधानमंत्री
घ. संसद

5. उस मंत्रालय की पहचान करें जिसने निम्नलिखित समाचार ज़ारी किया होगा:

क. देश से जूट का निर्यात बढ़ाने के लिए एक नई नीति बनाई जा रही है।	1. रक्षा मंत्रालय
ख. ग्रामीण इलाकों में टेलीफोन सेवाएँ सुलभ करायी जाएँगी।	2. कृषि, खाद्यान्न और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
ग. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत बिकने वाले चावल और गेहूँ की कीमतें कम की जाएँगी।	3. स्वास्थ्य मंत्रालय
घ. पल्स पोलियो अभियान शुरू किया जाएगा।	4. वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय
ङ ऊँची पहाड़ियों पर तैनात सैनिकों के भत्ते बढ़ाए जाएँगे।	5. संचार और सूचना-प्रौद्योगिकी मंत्रालय

6. देश की विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका में से उस राजनैतिक संस्था का नाम बताइए जो निम्नलिखित मामलों में अधिकारों का इस्तेमाल करती है।

क. सड़क, सिंचाई जैसे बुनियादी ढाँचों के विकास और नागरिकों की विभिन्न कल्याणकारी गतिविधियों पर कितना पैसा खर्च किया जाएगा।
ख. स्टॉक एक्सचेंज को नियमित करने संबंधी कानून बनाने की कमेटी के सुझाव पर विचार-विमर्श करती है।
ग. दो राज्य सरकारों के बीच कानूनी विवाद पर निर्णय लेती है।
घ. भूकंप पीड़ितों की राहत के प्रयासों के बारे में सूचना माँगती है।

प्रश्नावली

7. भारत का प्रधानमंत्री सीधे जनता द्वारा क्यों नहीं चुना जाता? निम्नलिखित चार जवाबों में सबसे सही को चुनकर अपनी पसंद के पक्ष में कारण दीजिए:

क. संसदीय लोकतंत्र में लोकसभा में बहुमत वाली पार्टी का नेता ही प्रधानमंत्री बन सकता है।
ख. लोक सभा, प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद का कार्यकाल पूरा होने से पहले ही उन्हें हटा सकती है।
ग. चूँकि प्रधानमंत्री को राष्ट्रपति नियुक्त करता है लिहाजा उसे जनता द्वारा चुने जाने की ज़रूरत ही नहीं है।
घ. प्रधानमंत्री के सीधे चुनाव में बहुत ज़्यादा खर्च आएगा।

8. तीन दोस्त एक ऐसी फिल्म देखने गए जिसमें हीरो एक दिन के लिए मुख्यमंत्री बनता है और राज्य में बहुत से बदलाव लाता है। इमरान ने कहा कि देश को इसी चीज़ की ज़रूरत है। रिज़वान ने कहा कि इस तरह का, बिना संस्थाओं वाला एक व्यक्ति का राज खतरनाक है। शंकर ने कहा कि यह तो एक कल्पना है। कोई भी मंत्री एक दिन में कुछ भी नहीं कर सकता। ऐसी फिल्मों के बारे में आपकी क्या राय है?

9. एक शिक्षिका छात्रों की संसद के आयोजन की तैयारी कर रही थी। उसने दो छात्राओं से अलग-अलग पार्टियों के नेताओं की भूमिका करने को कहा। उसने उन्हें विकल्प भी दिया। यदि वे चाहें तो राज्य सभा में बहुमत प्राप्त दल की नेता हो सकतीं थी और अगर चाहें तो लोकसभा के बहुमत प्राप्त दल की। अगर आपको यह विकल्प दिया गया तो आप क्या चुनेंगे और क्यों?

1`. आरक्षण पर आदेश का उदाहरण पढ़कर तीन विद्यार्थियों की न्यायपालिका की भूमिका पर अलग-अलग प्रतिक्रिया थी। इनमें से कौन-सी प्रतिक्रिया, न्यायपालिका की भूमिका को सही तरह से समझती है?

क. श्रीनिवास का तर्क है कि चूँकि सर्वोच्च न्यायालय सरकार के साथ सहमत हो गई है लिहाजा वह स्वतंत्र नही है।
ख. अंजैया का कहना है कि न्यायपालिका स्वतंत्र है क्योंकि वह सरकार के आदेश के खिलाफ़ फ़ैसला सुना सकती थी। सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार को उसमें संशोधन का निर्देश दिया।
ग. विजया का मानना है कि न्यायपालिका न तो स्वतंत्र है न ही किसी के अनुसार चलने वाली है बल्कि वह विरोधी समूहों के बीच मध्यस्थ की भूमिका निभाती है। न्यायालय ने इस आदेश के समर्थकों और विरोधियों के बीच बढ़िया संतुलन बनाया।
आपकी राय में कौन-सा विचार सबसे सही है?

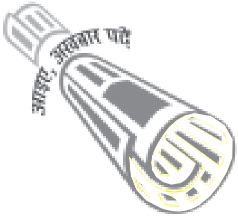

इस अध्याय में हमने देश की चार विभिन्न संस्थाओं के बारे में चर्चा की। आप कम-से-कम एक हफ्ते के समाचारों को इकट्ठा करके उन्हें चार समूहों में वर्गीकृत कीजिए:

- विधायिका की कार्यशैली
- राजनैतिक कार्यपालिका की कार्यशैली
- नौकरशाही की कार्यशैली
- न्यायपालिका की कार्यशैली